

Reg. No. : N-1316/2014-15



ISSN 2394-2207
November, 2020- April, 2021
Vol. VII, No. I
I2OR Impact Factor : 3.002

उठमेष



Umesh

An International Half Yearly
Peer Reviewed Refereed Research Journal
(Arts & Humanities)

प्रधान सम्पादक

डॉ० राधेश्याम मौर्य

सम्पादक

डॉ० शिवेन्द्र कुमार मौर्य

प्रकाशक : जन सेवा एवं शोध शिक्षा संस्थान, प्रतापगढ़, उ०प्र०



An International Half Yearly Peer Reviewed Refereed Research Journal (Arts & Humanities)

Vol. : VII

No. I

November, 2020-April, 2021

प्रधान सम्पादक

डॉ० राधेश्याम मौर्य

सम्पादक

डॉ० शिवेन्द्र कुमार मौर्य

सह-सम्पादक

डॉ० मनोहर लाल

डॉ० अखिलेश कुमार

डॉ० रामचन्द्र रजक

प्रकाशक

जन सेवा एवं शोध शिक्षा संस्थान, प्रतापगढ़-२३०००१ (उ०प्र०)

संरक्षक—मंडल

डॉ० चम्पा कुमारी सिंह, प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, उ०प्र०

डॉ० बी०एन० सिंह, पूर्व निदेशक, उ०प्र० राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद, उ०प्र०

डॉ० हरीशचन्द्र जायसवाल, पूर्व विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग, यूडिंग क्रिश्चियन कॉलेज, इलाहाबाद वि०वि०, प्रयागराज, उ०प्र०

सम्पादक

डॉ० राधेश्याम मौर्य, (राष्ट्रपति सम्मान प्राप्त) प्रवक्ता, जी०वी०आई०सी०, देल्हूपुर, प्रतापगढ़, उ०प्र०

डॉ० शिवेन्द्र कुमार मौर्य, पूर्व शोध छात्र, हिन्दी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, उ०प्र०

सह—सम्पादक

डॉ० मनोहर लाल, असि० प्रोफेसर, पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग, महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी, उ०प्र०

डॉ० अखिलेश कुमार, असि० प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, के०एस० साकेत पी०जी० कॉलेज, अयोध्या, उ०प्र०

डॉ० रामचन्द्र रजक, असि० प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, दक्षिण बिहार केन्द्रीय विश्वविद्यालय, गया, बिहार

सम्पादक—मण्डल

डॉ० कृष्ण कुमार कौशिक, प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, जामिया मिलिया इस्लामिया विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

डॉ० हिरोशी ससाकी, एसो० प्रोफेसर, डिपार्टमेंट ऑफ सोशल एजुकेशन, हिरोशिमा विश्वविद्यालय, जापान

डॉ० अनिल कुमार मौर्य, असि० प्रोफेसर, विधि संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, उ०प्र०

डॉ० समीर कुमार पाठक, असि० प्रोफेसर, डी०ए०वी० पी०जी० कॉलेज, वाराणसी, उ०प्र०

डॉ० रमाशंकर कुशवाहा, असि० प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, दयाल सिंह कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

डॉ० भावीश्वर पंगेनी, विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग, त्रिभुवन विश्वविद्यालय, काठमाण्डू, नेपाल

डॉ० कोमलचन्द राधा किशन, सेक्रेटरी, हेल्थ डिपार्टमेन्ट, पोर्टलुई, मॉरिशस

भिक्षु फ्रांसोमसाक वण्णसन, विहाराधिपति, वॉट थाई बुद्ध विहार, बैंकाक, थाईलैंड

वीर बहादुर महतो, सम्पादक, गोरखा पत्र (मगही) काठमाण्डू, नेपाल

परामर्श—मण्डल

डॉ० प्रकाश चन्द्र तिवारी, विभागाध्यक्ष, पर्यावरण विभाग, कमला नेहरू इंस्टीट्यूट ऑफ फिजिक्स एण्ड सोशल साइंस, सुल्तानपुर उ०प्र०

डॉ० रजनी बाला, एसो० प्राफेसर, हिन्दी विभाग, जम्मू विश्वविद्यालय, जम्मू कश्मीर

डॉ० संदीप वर्मा, असि० प्रोफेसर, जनसंचार विभाग, महात्मा गांधी अन्तरराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र

डॉ० मनोज कुमार मौर्य, असि० प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, त्रिपुरा विश्वविद्यालय, सूर्यमणि नगर, अगरतला

डॉ० श्यामनन्दन, असि० प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, महात्मा गांधी केन्द्रीय विश्वविद्यालय, मोतिहारी, बिहार

डॉ० प्रचेतस, असि० प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, यूडिंग क्रिश्चियन कॉलेज, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डॉ० अमित कुमार सिंह कुशवाहा, असि० प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, राजस्थान केन्द्रीय विश्वविद्यालय, राजस्थान

मूल्यांकन समिति

प्रोफेसर (डॉ०) संध्यारानी शाक्य, क्षेत्रीय उच्च शिक्षा अधिकारी एवं प्राचार्या, राजकीय महाविद्यालय, समथर, झाँसी, उ०प्र०

डॉ० प्रदोष रथ, असि० प्रोफेसर, पत्रकारिता एवं जनसंचार विभाग, उड़ीसा केन्द्रीय विश्वविद्यालय, उड़ीसा।

डॉ० अमिष वर्मा, असि० प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, मिजोरम विश्वविद्यालय, आइजॉल

डॉ० श्यामा सिंह, असि० प्रोफेसर, नेहरू ग्राम भारती मानित विश्वविद्यालय, झूँसी, इलाहाबाद

डॉ० धनजी प्रसाद, असि० प्रोफेसर, भाषा विज्ञान एवं भाषा प्रौद्योगिकी, महात्मा गांधी अन्तरराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र

डॉ० इंद्रजीत मिश्र, असि० प्रोफेसर, अंग्रेजी विभाग, डी०ए०वी०पी०जी० कॉलेज, बी०एच०यू०, वाराणसी

डॉ० राजेश सिंह कुशवाहा, असि० प्रोफेसर, पत्रकारिता एवं जन संचार विभाग, डॉ० राममनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, फैजाबाद

डॉ० राम रतन पासवान, असि० प्रोफेसर, शिक्षा संकाय, मगध विश्वविद्यालय, बोधगया।

डॉ० सुकेश लोहार, असि० प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, कल्याणी विश्वविद्यालय, कल्याणी, नदिया, पश्चिम बंगाल

नंदी पटौदिया, असि० प्रोफेसर, समाजशास्त्र एवं समाजकार्य विभाग, डॉ० हरीसिंह गौर केन्द्रीय विश्वविद्यालय, सागर, मध्य प्रदेश

डॉ० पीयूषकान्त शर्मा, एसो० प्रोफेसर, प्राचीन इतिहास विभाग, एम०डी०पी०जी० कॉलेज, प्रतापगढ़, उ०प्र०

डॉ० ज्ञानोबा त्रिंबक ढगे, विभागाध्यक्ष, राजनीति विज्ञान विभाग, कर्मवीर काका साहेब बाघ आर्ट्स, साइंस एण्ड कॉमर्स कॉलेज, पीपल गाँव (बी) नासिक, महाराष्ट्र

डॉ० अनिश कुमार वर्मा, असि० प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग, मड़ियाहूँ पी०जी० कॉलेज, मड़ियाहूँ, जौनपुर
डॉ० पंकज सिंह, असि० प्रोफेसर, अर्थशास्त्र विभाग, महामाया राजकीय महाविद्यालय, धनूपुर, हण्डिया, प्रयागराज
राम सिंह, असि० प्रोफेसर, भूगोल विभाग, जवाहरलाल नेहरू पी०जी० कॉलेज, एटा, आगरा, उ०प्र०

क्षेत्रीय सम्पादक

डॉ० अवधेश कुमार, असि० प्रो०, हिन्दी विभाग, डॉ० हरी सिंह गौर केन्द्रीय विश्वविद्यालय, सागर, मध्य प्रदेश
डॉ० रामप्रवेश रजक, असि० प्रो०, हिन्दी विभाग, कलकत्ता विश्वविद्यालय, पश्चिम बंगाल

प्रबन्ध-सम्पादक

डॉ० सीता राम सिंह, एसोसिएट प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, समाजशास्त्र विभाग, गणपत सहाय पी०जी० कॉलेज, सुलतानपुर, उ०प्र०
अजय कुमार मौर्य, शोध छात्र, तुलनात्मक धर्म दर्शन विभाग, सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी
रोमी मौर्या, शोध छात्रा, समाजशास्त्र विभाग, राजा श्रीकृष्ण दत्त पी०जी० कॉलेज, जौनपुर, उ०प्र०

अनुवाद सहायक

डॉ० सुमनलता कुमारी, पूर्व शोध छात्रा, हिन्दी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
हरिश्चन्द्र कुशवाहा, शोध छात्र, अंग्रेजी विभाग, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

विधि-परामर्श

ज्ञान प्रकाश मौर्य : पूर्व राज्य सूचनायुक्त, उ०प्र०
डॉ० आदेश कुमार : असि० प्रोफेसर, विधि संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी

सम्पादकीय सम्पर्क

जन सेवा एवं शोध शिक्षा संस्थान

सी-23, आवास विकास कालोनी, प्रतापगढ़-230001 (उ०प्र०) भारत

मो०- 08004802456, 09415627372

ई-मेल : unmesh0110@gmail.com, shivendrkr.maurya@gmail.com

प्रकाशक :

जन सेवा एवं शोध शिक्षा संस्थान

सी-23, आवास विकास कालोनी, प्रतापगढ़-230001, (उ०प्र०), भारत

मुद्रक :

राज ग्रॉफिक्स

बी०एच०यू० रोड, लंका, वाराणसी

मो० : 09415842611

नोट : सम्पादन, संचालन-पूर्णतः अवैतनिक/अव्यावसायिक/अनियतकालीन। उन्मेष में प्रकाशित लेखकों के विचार उनके अपने हैं। लेखों एवं उद्धरणों से सम्बन्धित किसी भी वाद-विवाद के लिए लेखक की जिम्मेदारी स्वयं की होगी। सम्पादक, प्रकाशक एवं उन्मेष परिवार के किसी भी सदस्य की जिम्मेदारी नहीं होगी। किसी भी विवाद के लिए न्याय क्षेत्र इलाहाबाद उच्च न्यायालय होगा।

कोविड-19 की पहली लहर से दुनिया अभी उबर भी न पायी थी, कि दूसरी लहर आ धमकी। इस दूसरी लहर का सर्वाधिक प्रभाव भारत पर पड़ा। देखते ही देखते भारत के सभी अस्पताल कोविड-19 के मरीजों से भर गये। अनगिनत मरीज अस्पताल तक पहुँच ही नहीं पाये, कुछ जो पहुँचे भी उन्हें बिस्तर उपलब्ध न होने की वजह से मर्ती ही नहीं कराया जा सका। अस्पताल में बिस्तर की समस्या से भी जो बड़ी समस्या थी, वह थी ऑक्सीजन सिलेण्डर की कमी। ऑक्सीजन सिलेण्डर की सुचारु रूप से आपूर्ति न होने के कारण चहुँओर जैसा कोहराम मचा वह किसी भी भयावह दृश्य से कम न था।

ऑक्सीजन की कमी से चारों ओर मौते हो रही थीं, सभी मूक बने देख रहे थे। सरकार चुप थी, जनता बेबस थी, परिजन लाचार थे। लाशों से श्मशान पट चुके थे, लकड़ियाँ समाप्त थीं। जहाँ-तहाँ लाशों का अम्बार लगाया जा रहा था, हजारों की संख्या में खुली लाशें गंगा के हवाले थीं, उन्हें नील-कौवे खा रहे थे, कुछ लाशें क्रेन से ढांकी जा रही थीं। श्मशान में जलाने की कीमत पच्चीस से पचास हजार रुपये थी। लॉकडाउन लगाकर हमें घर में सुरक्षित कर दिया गया था। मौते के आंकड़े छिपा दिये गये थे। इतना कुछ होने के बाद दूसरी लहर का प्रभाव कम हो रहा था। उचित अवसर देखकर वैज्ञानिकों ने तीसरी लहर की घोषणा कर दी।

केन्द्रीय ड्रग्स स्टैंडर्ड कंट्रोल ऑर्गनाइजेशन (CDSCO) द्वारा कोविड वैक्सीन बनाने की अनुमति के बाद भारत में आठ कम्पनियों ने वैक्सीन पर अपना परीक्षण कार्य आरम्भ किया। इनमें से दो कम्पनियों की वैक्सीन पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है। पहली पुणे स्थित सीरम इंस्टीट्यूट ऑफ इण्डिया द्वारा निर्मित एस्ट्राजेनेका की टीका 'कोविशील्ड' है। कोविशील्ड वैक्सीन विमैन्जी के एडेनो वायरस पर आधारित है। जो भारत में अब तक सबसे सफल व कारगर वैक्सीन मानी गयी है। दूसरी हैदराबाद स्थित भारत बायोटेक लिमिटेड और इंडियन काउंसिल ऑफ मेडिकल रिसर्च द्वारा निर्मित 'कोवाक्सिन' है। कोवाक्सिन वायरस के इन एक्टिवेटेड वायरस पर आधारित है। यह भारत के लिए दूसरी सफलतम वैक्सीन है। इसके अतिरिक्त जाइकोव-डी, स्पूतनिक-V, MRNA-1273, NVX-Cov 2373 आदि हैं जो अभी उपलब्ध नहीं है। जो उपलब्ध है उनमें से किसी का भी उपयोग कर आगामी लहर से सुरक्षित हुआ जा सकता है।

कोरोना की इस दूसरी लहर के बीच 'उन्मेष' का यह नया अंक प्रकाशित हो रहा है। सातवें वर्ष के इस प्रथम अंक में देश भर के विभिन्न संस्थानों के शोध अध्येताओं के संशोधित शोधपत्र सम्मिलित किये गये हैं। नेपाल से डॉ० सुरेश कुमार धुंगाना का शोध-पत्र भी इस अंक में सम्मिलित है, जो इस अंक की उपलब्धि है। इतने अच्छे शोध-पत्र के लिए मैं उन्हें साधुवाद देता हूँ। इस अंक के सफलतम प्रकाशन के लिए इससे जुड़े समस्त सदस्यों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ।

Index

♦ साहित्यिक पत्रकारिता के विकास में 'संचेतना' की भूमिका आनन्द प्रकाश सिंह	1-3
♦ दलित कविताओं का चिंतन और मूल्य डॉ० दिनेश राम	4-6
♦ सामाजिक परिवर्तन एवं संचार माध्यम डॉ० अमित कुमार	7-9
♦ गोस्वामी तुलसीदास के काव्य में हनुमत् स्तवन क्षेमेन्द्र भारद्वाज	10-12
♦ मैत्रेयी पुष्पा के 'अल्मा कबूतरी' उपन्यास में जनजातीय जीवन-संघर्ष प्रदीप कुमार सौर	13-16
♦ दिव्यांगजनों की मनोदशा अमित कुमार पाण्डेय	17-18
♦ समाज में स्त्री मुक्ति का संघर्ष प्रतिभा सिंह	19-21
♦ निराला की औपन्यासिक संवेदना (कुल्ली भाट के विशेष सन्दर्भ में) संदीप कुमार तिवारी	22-23
♦ क्या भारत एक महाशक्ति है (सामाजिक-आर्थिक परिपेक्ष्य में विश्लेषण) डॉ० राजेश मोर्य व प्रो० जे०पी० मित्तल	24-29
♦ घाघ भड्डरी की उक्तियों में अभिव्यक्त जीवन सन्दर्भ आशीष कुमार मोर्य	30-31
♦ भारतीय संविधान की निर्माण-प्रक्रिया रामा नन्दन सिंह	32-33
♦ मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यास 'चाक' में नारी की स्थिति पुरबी कलिता	34-36
♦ अब्दुल बिस्मिल्लाह के उपन्यासों में बदलते जीवन मूल्य रूपधर गोमांगो	37-39
♦ बैगा जनजातीय में सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तन : एक अवलोकन डॉ० सन्तोष कुमार सिंह	40-41
♦ आपका बंटी : समस्या के विविध आयाम गरिमा गुप्ता व हिमांशु शेखर सिंह	42-45
♦ कुडुख आदिवासी समुदाय : गीत और जीवन राग पार्वती तिकी	46-48
♦ समकालीन हिन्दी कविता में जीवन-संघर्ष डॉ० सुरजीत सिंह मोर्य	49-53
♦ नमामि गंगे डॉ० रश्मि कुमारी	54-55
♦ सौत्रान्तिकदर्शनस्य परिचय: अजयकुमारमौर्यः	56-58
♦ भटकाव के बीच जीवन की तलाश (विशेष सन्दर्भ : सर्कस) रवीन्द्र कुमार यादव	59-62
♦ 'आर्यावर्त' में कविप्रिया का चरित्र हरिशंकर भारती	63-64
♦ पितृसत्ता और शिवमूर्ति की कहानियाँ आशीष कुमार सिंह	65-67
♦ काशी की धार्मिक परम्परा डॉ० अंजना वर्मा	68-70

♦	प्रतीत्यसमुत्पाद में सलायतन का महत्व अर्चना देवराव हाडके	71-74
♦	अमरकांत के कथा साहित्य में मध्यवर्गीय पारिवारिक जीवन का तात्त्विक विश्लेषण दान बहादुर यादव	75-77
♦	भक्तिकालीन हिन्दी सन्त साहित्य में सांस्कृतिक अभिव्यंजना के रूप में ब्रह्म और जीव डॉ० ज्ञान प्रकाश मंगलम	78-81
♦	संजीव के 'धार' उपन्यास में मैना का चरित्र धर्मेन्द्र कुमार व डॉ० सुनीता यादव	82-84
♦	निर्मल वर्मा के उपन्यासों में नियति का स्वरूप वर्षा मोर्या	85-89
♦	शिवमूर्ति की कहानियों में स्त्री रिंकी कुमारी	90-92
♦	जनपक्षधरता के अनोखे कवि नागार्जुन डॉ० सुरेन्द्र प्रताप सिंह	93-94
♦	प्राचीन भारतीय धर्मशास्त्रों एवं स्मृतिग्रंथों में महिलाओं की सामाजिक स्थिति (दशा एवं दिशा) डॉ० जितेन्द्र कुमार वर्मा	95-97
♦	लैंगिक असमानता डॉ० पुरुषोत्तम लाल विजय	98-100
♦	वर्तमान समय में संस्कारों की उपादेयता सुषमा सिंह व डॉ० अनिता कुमारी	101-104
♦	कूँअर सिंह महाकाव्य में राष्ट्रीयता का स्वरूप विनोद कुमार मिश्र	105-109
♦	गाँधी जी और सुशासन सुधीर कुमार यादव	110-111
♦	भूषण की कविता में युगबोध अजय कुमार प्रजापति	112-114
♦	लोकसाहित्य : एक सांस्कृतिक यात्रा सुदीप तिरकी	115-116
♦	आदिवासी समाज की जड़ों को तलाशती 'जड़ों की जमीन' वेद प्रकाश सिंह	117-118
♦	वर्तमान परिदृश्य और संस्कृत कविता डॉ० प्रचेतस	119-121
♦	गद्य विद्या में व्यंग्य-साहित्य का उद्भव और विकास सुधीर कुमार जोशी	122-125
♦	किन्नर : शाब्दिक अर्थ एवं सामाजिक परिवेश अभिषेक सिंह व डॉ० संजय श्रीवास्तव	126-128
♦	बाजारवाद, स्त्री संवेदना और इक्कीसवीं शताब्दी की हिन्दी कविता डॉ० प्रद्योत कुमार सिंह	129-131
♦	आठवें दशक के कथाकार उदय प्रकाश की कहानियों में भारतीय जीवन का सच मनोज कुमार सिंह	132-135
♦	प्रकृति के चितरे निबन्धकार हजारी प्रसाद द्विवेदी पाठक धनंजय	136-137
♦	स्त्री विमर्श : कृष्णा सोबती के उपन्यासों के सन्दर्भ में श्रीमती सुजाता रानी	138-140

Index

- ◆ Covid 19 (An Opportunity to Indian Industries) 1-2
Dr. Deepa Singh
- ◆ Constitutional History of Parliament Dissolution in Nepal 3-8
Dr. Suresh Kumar Dhungana
- ◆ Origin of State and Duties of King in The Mahabharata (Shantiparva) 9-11
Dr. Vijay Kumar Verma & Dr. Sanchita Ray
- ◆ Education and Social Inclusion: A journey of Enactment of Right to
Education Act 2009 in India 12-17
Deepak Kumar Yogi



मैत्रेयी पुष्पा के 'अल्मा कबूतरी' उपन्यास में जनजातीय जीवन-संघर्ष प्रदीप कुमार सौर*

*सहायक प्राध्यापक (अतिथि), हिन्दी विभाग, डॉक्टर हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर, मध्यप्रदेश

सारांश : हिन्दी कथा साहित्य की चर्चित एवं बेबाक लेखिका मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यासों में मध्यम एवं निम्नवर्गीय ग्रामीण जीवन-संस्कृति और संघर्ष को लेकर एक नए अध्याय की शुरुआत की है। यानी इनका कथा-साहित्य अन्य कथाकारों की तुलना में एक नई चाल में ढला है। 'हिन्दी साहित्य में पहली बार हुआ कि किसी महिला ने शुद्ध गाँव-कस्बे की कहानियाँ लिखीं। मैत्रेयी के पास ऐसे अनुभव थे, जिन पर मध्यमवर्गीय महिलाएँ सो भी नहीं सकती थीं। उन पीड़ित महिलाओं पर गहराई, संवेदना, समझ के साथ लगातार लिखने वाली पहली महिला लेखिका मैत्रेयी हैं।'¹ मैत्रेयी पुष्पा जन्म 30 नवम्बर, 1944 ई. को उत्तर प्रदेश के अलीगढ़ जिले के सिकुरा गाँव में हुआ। इनका बचपन और आरम्भिक शिक्षा झाँसी जिले के खिल्ली गाँव में तथा उच्च शिक्षा बुन्देलखण्ड कालेज, झाँसी में हुई। इसके बाद दिल्ली में रखकर इन्होंने साहित्यिक गतिविधियों में सक्रिय लेखन कार्य किया। सही अर्थों में ये हिन्दी कथा साहित्य में आम जीवन के संघर्ष और संवेदना की एक महत्वपूर्ण उपस्थिति हैं। दूसरे शब्दों में कहा जाये तो समकालीन कथा साहित्य की ये पहली महिला लेखिका हैं, जिन्होंने हिन्दी कथा-धारा को वापस गाँव की ओर मोड़ा और कई अविस्मरणीय चरित्र हमें दिए। इन चरित्रों ने शहरी मध्यवर्ग को उस देश की याद दिलाई जो धीरे-धीरे शब्द की दुनिया से गायब हो चला था। मुख्य शब्द : समकालीन कथा साहित्य, गाँव, संवेदना, पिछड़ा, जनजातीय आदि।

मैत्रेयी पुष्पा ने बुन्देलखण्ड के जन-जीवन और संस्कृति के बहुत कुछ सीखा है। इसी कारण इनके उपन्यासों में देश का अत्यन्त पिछड़ा एवं जनजातीय अंचल बुन्देलखण्ड जीवन्त हो उठता है। हिन्दी गद्य-साहित्य के प्रसिद्ध आलोचक डॉ. रामचन्द्र तिवारी मैत्रेयी पुष्पा के संदर्भ में लिखते हैं कि, "हमारा ध्यान उनकी कुछ सामान्य विशेषताओं की ओर बरबस चला जाता है। उनके उपन्यास अंचल-विशेष के रंग में रंगे होने पर भी आंचलिक नहीं हैं। उनमें गाँव का मनुष्य अकेला नहीं है। उसके साथ प्रकृति है, पारम्परिक संस्कार हैं, लोक-देवता हैं, जातीय स्मृतियाँ हैं और पूरी लोक-संस्कृति है। ...सबसे बड़ी बात यह है कि उनमें सच कहने का साहस है और उनकी क्रांति-चेतना किसी विचारधारा के दायरे में कैद न होकर अनुभव की आँच और अनुभूति के ताप से प्रेरित है। निश्चय ही समकालीन हिन्दी उपन्यासकारों में वे प्रथम पंक्ति की हकदार हैं।"²

बुन्देलखण्ड के परिवेश और परिवार की स्वतंत्रता से मिली ऊर्जा ने मैत्रेयी पुष्पा के जीवन में गहरी समझ मिली। परिस्थितियों ने उन्हें स्वावलंबी बनाया, मुसीबतों ने हिम्मत दी। जब वे लिखने की दुनिया में आईं तो उनके पास जो व्यापक अनुभव थे, वे किसी समकालीन रचनकार के पास नहीं दिखाई देता है। उनके उपन्यासों में ऐसे कथानक और पात्र आये हैं कि उच्च और सामंत वर्ग में भगदड़ मच गई। अनुभवों की रेशमी चादरों में लिपटे लोग भरोसा नहीं कर पाए कि यह जीवन इसी देश का है, ये पात्र इसी समाज के हैं। हालांकि बुन्देलखण्ड में अधिक समय तक रहने के कारण मैत्रेयी पुष्पा ने आदिवासी जनजीवन और उनकी यथार्थ संस्कृति को भी महसूस किया और उसे लेखनी में बखूबी उजागर करने की भी कोशिश की है। बहरहाल, प्रसिद्ध आंचलिक उपन्यासकार एवं आम जनजीवन की पैराकार मैत्रेयी पुष्पा के पास अनुभवों का व्यापक संसार है। इनके उपन्यासों जैसे- 'स्मृति दंश', 'बेतवा बहती रही', 'इदन्मम', 'चाक', 'झूलानट', 'अल्मा-कबूतरी', 'कही ईसुरी फाग', 'अगनपाखी', 'त्रियाहठ' एवं 'गुनाह-वेगुनाह' आम ग्रामीण जनजीवन का संघर्ष दिखाई देता है, पर 'अल्मा-कबूतरी' जनजातीय जनजीवन की संस्कृति और संघर्ष का विशेष दस्तावेज है। इस उपन्यास में जनजातीय जीवन संस्कृति और उनके संघर्ष की अनुभूति साफ-साफ दिखाई देती है। इसके लिए मैत्रेयी ने अपनी रचनाधर्मिता और जीवन में निरन्तर संघर्ष किया है। समाज में जनजातियों के लिए यह रचनात्मक संघर्ष अभी समाप्त नहीं हुआ है।

यदि हम जनजातीय लोगों के बारे में विचार करें तो इनका पारिवारिक वर्गों का एक समूह है। इनके सभी सदस्य एक ही भूमि पर निवास करते हैं और एक भाषा-भाषी, विवाह की प्रथाओं तथा कारोबार सम्बन्धी एक ही नियम का पालन करते हैं। वे आदान-प्रदान सम्बन्धी पारम्परिक व्यवहार को विकसित करते हैं। प्रत्येक गोत्र के सदस्यों का परस्पर रक्त-सम्बन्ध जुड़ा होता है। इनमें वंश में परम्परागत सरदार होता है। लेकिन समय के साथ साहित्य भी बदलता है और उसकी विषय वस्तु भी। इन जनजातीय समाज के ऊपर सामंतवादी शक्तियों द्वारा शोषण होने कारण जनजातियों की जीवन संस्कृति और संघर्ष आज साहित्यिक विमर्श बन गया है और इसी का परिणाम है मैत्रेयी पुष्पा कृत 'अल्मा कबूतरी' उपन्यास।

'अल्मा कबूतरी' में मैत्रेयी पुष्पा ने बुन्देलखण्ड के जंगलों में बसने वाली जरायमपेशा व खानाबदोश कबूतरा

जनजातियों की उपेक्षित, तिरस्कृत, अपमानित, प्रताड़ित जनजातीय जीवन एवं महिला की स्थिति जीवन संघर्ष का चित्रण किया गया है। जनजातियों में नट, मदारी, कंजर, साँसी, सपेरे, पारदी, बनजारे, बावरिया, कबूतरे आदि घुमन्तू जीवन—यापन करते हैं। इस उपन्यास में कबूतरा जनजातियों के जीवन के विविध पहलू, अंधविश्वास, समस्याओं, विवाह, मृत्यु की परम्पराओं, जीवन संघर्ष, विडम्बनाओं व कज्जाओं की भोग लिप्सा आदि का चित्रण किया गया है। “अल्मा कबूतरी”, कबूतरा जाति की कथा मात्र नहीं है, वह समकालीन राजनीति की दिशाहीनता, अपराधीकरण, सत्ता—संघर्ष, बेरोजगारी तथा जीवन—मूल्यों के घोर पतन की यथार्थ गाथी भी है। सामाजिक जड़ता को तोड़ती और पारम्परिक रूढ़ियों को चुनौती देती हुई अल्मा जैसी दलित नारी की अपराजेय जिजीविषा समकालीन नारी—चेतना को शक्ति और प्रेरणा देने वाली है। वैसे यदि इसे अल्मा कबूतरी की व्यथा—कथा के रूप में देखा जाय तो भी इसमें दर्द की एक—एक रेखा हमारे मन में व्यवस्था के प्रति आक्रोश उत्पन्न करने में समर्थ है। इसे भी उपन्यास की शक्ति माना जायेगा।”³

उपन्यास में महिला कदमबाई, भूरी बाई और अल्मा के माध्यम से इस जाति की स्त्रियों के संघर्षमय तिरस्कृत और शोषित जीवन का भी वर्णन है। कदमबाई के पति का अपराध में लिप्त होने की वजह से इसे पति की अनुपस्थिति में अनेक परेशानियों का सामना करना पड़ता है। वह पूरे जीवन मनुष्यता की लड़ाई लड़कर अपने आत्मस्वाभिमान के प्रति संघर्ष करती रही। यह भी सच है कि आजाद भारत में कबूतराओं की लड़ाई आज भी जारी है। कबूतराओं से सम्बन्ध रखने वाले कज्जा यानी उच्च वर्ग के लोगों को भी बहिष्कृत कर दिया जाता है। जैसे इस उपन्यास में मंसाराम कदमबाई से सम्बन्ध रखने के कारण अपने ही परिवार और समाज में हेय दृष्टि से देखे जाते हैं। अगर ये लोग अपने परम्परागत पेशों चोरी, डकैती, सेंधमारी और लूटमार, हत्या से अलग होकर, शिक्षित होकर सम्मानित जीवन जीना चाहते हैं तो उच्च वर्ग के लोग उन्हें आगे बढ़ाना नहीं चाहते हैं और यदि उच्च शिक्षा प्राप्त करके अधिकारी बनना चाहते हैं तो, कज्जा लोग उनके स्वप्नों को चूर—चूर कर देते हैं।

इस उपन्यास में बुन्देलखण्ड के मूल निवासी के साथ और राजस्थान से भागकर बसे जनजातीय लोग भी हैं। इनके ऊपर हमेशा से ही पुलिस और समाज का जुल्म बरसता रहता है, क्योंकि जनजातीय समाज में जन्म लेना ही अपराध है। ‘कबूतरा’ जाति समाज की वह अन्तिम जाति है, जहाँ जीवन के लिए सबसे आवश्यक वस्तु ‘रोटी, कपड़ा और मकान’ के लिए भी तरसना पड़ता है। ‘अल्मा कबूतरी’ के सभी पात्र वही हैं, जो कभी—कभी सड़कों, गलियों में घूमते या अखबारों की अपराध—सुर्खियों में दिखाई देनेवाले कंजर, साँझी, नट, मदारी, सँपेरे, पारदी, हाबूड़े, बनजारे, बावरिया, कबूतरे न जाने कितनी जन—जातियाँ हैं, जो सभ्य समाज के हाशियों पर डेरा लगाए सदियाँ गुजार देती हैं— हमारा उनसे चौकन्ना सम्बन्ध सिर्फ कामचलाऊ ही बना रहता है। उनके लिए हम हैं कज्जा और

‘दिकू’ यानी सभ्य—सम्राज्य, ‘परदेसी’, उनका इस्तेमाल करने वाले शोषक— उनके अपराधों से डरते हैं, मगर उन्हें अपराधी बनाए रखने के आग्रही भी हैं।

इन जनजातियों के अपराधी प्रवृत्ति के संदर्भ में लेखिका कहती हैं कि, “सन् 1936 ई में पंडित जवाहरलाल नेहरू अत्यंत दुखी होकर कहा था— अपराधी जनजाति अधिनियम के विनाशकारी प्रावधान लेकर मैं चिंतित हूँ। यह नियम नागरिक स्वतंत्रता का निषेध करता है। नेहरू जी ने ब्रिटिश हुकूमत के खिलाफ बोलते हुए इसे जड़ से उखाड़ने की ख्वाहिश जताई थी। देश को जब आजादी मिली, जवाहरलाल नेहरू प्रधानमंत्री बने। उन्होंने लोकतंत्र की पांचवी वर्षगाँठ तक अपने वादी को पूरा कर दिखाया। जरायमपेशा औरतों, सन् 1952 में तुम घुमंतू लोग गाँव के मुखिया से, पटवारी से और थानेदार की निगरानी से मुक्त हुए थे। नाम मिला था— विमुक्त जाति। हुक्म की इबारत ने वर्कर कानून को खात्मा कर दिया, ऐसा ही लगा था। मगर कथनी और करनी, का फर्क सदा दोगला होता है, सो वही हुआ। अफसोस दोगुना तो इसलिए होता है कि कलम भी झूठी पड़ गई।”

यह मानना है कि कबूतरा पुरुष या तो जंगल में रहता है या जेल में और स्त्रियाँ शराब की भट्टियों पर या सामंतवादी या उच्चवर्ग के बिस्तारों पर। कथाकार मैत्रेयी पुष्पा ने ‘अल्मा कबूतरी’ में इन्हीं अपरिचित लोगों की कहानी उठाई है। इस उपन्यास में ‘बुन्देलखंड की विलुप्त होती जनजाति कबूतरा समाज का लगभग सम्पूर्ण ताना—बाना यहाँ मौजूद है। इस जाति के लोगों के लिए संसार में दो गज जमीन भी दफन होने के लिए नहीं है। आजीविका के साधन के रूप में पीढ़ियों से चली आ रहे चोरी, उठाईगीरी, कत्ल जैसे कर्म इन्हें करने पड़ते हैं। इन्हें अपना पेट भरने के लिए विवश होकर अपना ईमान और शर्म ताक पर रखना पड़ता है।

जनजातीय महिला कदमबाई के पति की जब दर्दनाक मौत होती है तो वह समाज में अकेली और निराश्रित हो जाती है। विवशतावश उसकी बस्ती अभी मंसाराम माते के खेत ही है। मंसाराम छल से कदमबाई का बलात्कार करता है, पर वह उसे पहचान कर भी उसके नाम नहीं ले सकती है। कुछ समय बाद वह मंसाराम के अवैध संतान के रूप में राणा को जन्म देती है। इसके लिए कदमबाई को समाज से बहुत ही संघर्ष करना पड़ता है और अंत में अडिग होकर कहती है कि, “नंगे ठूठ—सी कदमबाई ने गजब कर डाला। हथेलियों के बीच एक नाजुक पंखुड़ी दबाए बवंडर में खड़ी है, उन्हें इल्म नहीं था। गर्भ में बच्चा सधा रहा। न गिराया, न गिरने दिया। हौल गर्दिश छाती पर झेलती रही, पेट तक आने ही नहीं दी। रेतगर्द में अंटी कदमबाई ने मुट्ठी खोलकर देखी और मुस्करा पड़ी। जनेऊधारी विद्वान बने मंसाराम का मखौल उड़ाती बच्चे के साथ लुका—छिपी करने लगी।”⁴

कदमबाई को वह दिन भी याद आता है जब वह पेट में बच्चे को लेकर दो लोगों का आहार जुटाने के लिए किस तरह संघर्ष करती थी और सभ्य समाज द्वारा प्रताड़ित होने पर भी हौसला कम नहीं होने देती थी। वह कहती है कि, “मैं सब कुछ झेल जाऊँगी। गर्भ के दिन कैसे निभा लिए? भारी गगरी—सा पेट लेकर मोठ से महुआ लाना आसान नहीं था, पर रोजी—रोटी का

सवाल था। दो जीवों का आहार जुटाना था। भूख ने वेशर्मी पैदा कर दी— बस रूकी खड़ी थी, मैं चढ़ना चाहती थी। पहली सीढ़ी पर पांव ही रखा कि बस में से आवाजें उठीं— कबूतरी है, कबूतरी! गाड़ी में बच्चा पैदा कर देगी।”⁵

राणा की माँ कदमबाई कबूतरी निम्नवर्ग की है और पिता मंसाराम कज्जा यानी उच्चवर्ग का है। यानी राणा वीच वर्ग का आदमी है। इसी कारण कदमबाई हमेशा कश्मकश में रहती है कि इसके उपर कबूतरा संस्कार हावी हो या कज्जाई संस्कार। इस संदर्भ यह प्रसंग आता है कि जब राणा ग्यारह-बारव वर्ष का था तो कबूतरा समाज के नियमानुसार उसे भी चोरी की कला सिखाई जाने लगी, परन्तु वह पहली बार में ही असफल रहा और वहाँ से बेहोश होकर लौटा। चार दिन तक ज्वर से तपने के बाद जब वह स्वस्थ हुआ तो माँ कदमबाई से चोरी न करने की जिद पकड़कर बैठ गया। कदमबाई के सामने बहुत बड़ी दुविधा आ गयी, एक तरफ वह उसे मंसाराम का बेटा कहना चाहती थी और दूसरी तरफ कबूतरा समाज के मुखिया 'सरमन' की नाराजगी से डरती थी। वह कहती है कि, “मैं इसको दुनिया के हिसाब से नहीं ढाल पाऊँगी। फिर क्या होगा? यह नासमझ अपने रास्ते पर अकेला चलेगा! दूसरी ही कुचल मसलकर खत्म कर डालेंगे। अकेले चलना आसान नहीं, ऐसा होता तो मैं भी कोई गैल बना लेती। राणा की असलियत तक नहीं खोल सकी। जबकि दिल कहता है कि उसे मंसाराम का बेटा कहकर जगजाहिर कर दूँ। डर लगता है, यह जिन्दगी भी हाथ से जाती रहेगी।”⁶

जीवन की विसंगतियों के बीच फंसा कदमबाई का पुत्र राणा जब बार-बार चोरी करने में असफल हो जाता है तो कबूतरा जनजाति की बस्ती का मुखिया कदमबाई पर जुर्माना लगा देता है। बस्ती के बनाये नियम में एक दिन हर परिवार को दारू बनाने के लिए मिलता है, वह भी मिलना बन्द हो गया। मसलन, उसके हिस्से का दिन का भी मुखिया ने दण्डस्वरूप स्वयं ले लिया। फिर भी कदमबाई हार नहीं मानी, जैसे-तैसे अपने और राणा के लिए अन्न और भोजन का प्रबन्ध करती रही। इस पर मलिया काका और कदमबाई के वार्तालाप में कितनी मार्मिकता झलकती है, “हँसना क्या मुश्किल है मलिया काका, खाने को रोटी, पीने को पानी हो, बस। जुटा ही लेते हैं किसी तरह। मुखिया ने दारू बनाने की बारी छीन ली, जंगल तो नहीं छीन लिया। पेड़ लकड़ी गिरा ही देते हैं। हमें चोरी करने आती ही है। कर ही लाते हैं। आदमी काम आए न आए। कुदरत काम आ ही जाती है।”⁷ कदमबाई के उपर्युक्त कथन से जनजातीय समाज की संस्कृति और संघर्ष का दर्द उभरकर सामने आता है।

बहरहाल, इस समाज में शिक्षा के प्रति भी जागरूकता परम्परागत अभिशाप है। जब राणा को पढ़ाने के लिए रामसिंह आता है तो उसे लेकर जाना चाहता है। पर बस्ती के लोग उसे ले जाने और पढ़ाने का विरोध करते हैं। विरोध की भीड़ में मलिया काका ने रामसिंह की ओर से सहमति जताई। मलिया काका की सहमति ने कदमबाई को भी आत्मविश्वास से भर देता है। रामसिंह वही व्यक्ति है जो राणा के जन्म लेने पर आया और फिर राणा को पढ़ाने के लिए आता है। कदमबाई अपने पुत्र राणा को पढ़ाने का निश्चय करती है और अंत में रामसिंह के साथ भेजे हुए कहती

है कि, “भूल जाना रे कि तेरी अम्मा कबूतरी है। मद ढालने का काम करती रही है और अब मद के मालिकों की मजदूरी करती है। मत याद करना कि तेरा बप्पा पुलिस के हाथों... कि गाँव के ही लोगों ने... अब तेरी जिन्दगी बदल रही है बेटा।”⁸

उपन्यास जनजातीय समाज के विविध रंगों की छींटों से भरा हुआ है, जो सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक द्वंद्व के साथ पुरुष और स्त्री की के द्वंद और संघर्ष को भी बयां करता है। इसमें स्त्री की मार्मिक संवेदना और संघर्ष भी निहित है। उपन्यास में अल्मा को जब उसके पिता रामसिंह पढ़ा-लिख कर कज्जा में शामिल करना चाहते हैं, तब अनेक व्यक्तियों द्वारा उसका यौन शोषण किया जाता लेकिन अनेक संघर्ष करने बाद अल्मा पूर्व डकैत और समाज कल्याण मंत्री रामशास्त्री जैसी मंत्री को अल्मा इतनी प्रभावित करती है कि वह उसे छूने की कोशिश भी नहीं कर पाता है। अल्मा कदमबाई के पुत्र राणा से प्रेम करती है उसके प्रति निष्ठा और समर्पण का भाव रखती है। अल्मा के विच्छेद में राणा मानसिक रूप से विकसित हो जाता है, इस बात को जानकर अल्मा राणा से मिलने के लिए विकल हो जाती है। अनेक प्रयासों के बाद वह मड़ोरा खुर्द जाकर राणा से विवाह करती है। रामशास्त्री मंत्री की हत्या हो जाने पर वह अपनी जाति के लोगों के आगे बढ़ाने के लिए मंत्री पद की उम्मीदवार बनती है और ऐसे उसका राजनीति में आगमन होता है।

उपन्यास की बड़ी विशेषता यह है कि इसमें महिलाओं को राजनीति की वस्तु बताया गया है। अल्मा जब सूरजभान की कैद से भाग जाती है तो सूरजभान कहता है कि, “मुश्किल यह है कि विरोधी पार्टी के लोग उसे माँ-बहन का दर्जा देकर छाती कूटेंगे। चाँदी हो जाएगी। समाजसेवी संस्थाएँ अलग झंडियाँ ले-लेकर दौड़ पड़ेगी। उनका चलना, फलना-फूलना ऐसी ही घटनाओं पर टिका रहता है। देखना कि कैसे उस लड़की के हगने-मूलने से लेकर महीनादारी तक का हिसाब रखती है और सबसे ज्यादा कशीबी सिद्ध होती है। अनुदान पचाने के नायाब तरीके। अपने-अपने दौंव। ऐसा न होता तो देश के बड़े से बड़े साधु-तांत्रिकों के लंगोट कौन चीर पाता? हमारे मंडल को कर्मंडल में धरकर बेतवा में सिराने वाले लोग।”⁹ इस बात से यह पता चलता है कि राजनेता वोटों के समय थोड़ा से अच्छा काम करके यश कमाना चाहते हैं, जिससे वे सत्ता में वापस आ जायें।

स्त्री संघर्ष की यथार्थ पीड़ा इसमें सायास देखी जा सकती है। जब अल्मा के पिता की मृत्यु हो जाती है। वह राणा को पत्र बताती है कि पिता के मृत्यु के बाद पिता के मित्र दुर्जन सिंह ने उसके साथ कैसा व्यवहार किया। जो अल्मा उसकी बेटी जैसी थी, दुर्जन सिंह रक्षक से सौदागर बन जाता है। वह अपनी विवशता को बयां करती हुई कहती है कि, “पिता की मौत के बाद के दिन थे वे। बंद कोठे में अंधेरा बिलखता था या मैं ? धरती रोती थी कि मेरी आँखें? मुँह से आवाज नहीं, जलती हुई भाप निकलती, क्योंकि दुर्जन का सख्त हुकुम था— मेहमान को हँसकर रिझाना है, रोकर गवाना नहीं।”¹⁰

शिक्षा एवं बौद्धिकता के प्रति जब-जब इस समाज का कोई भी व्यक्ति आवाज उठाता है तो उसे अपने ही समाज और लोगों के द्वारा प्रताड़ना सहनी पड़ती है। ये लोग अपने जीवन को

परम्परागत जीना चाहते हैं। उपन्यास में रामसिंह अपनी पुत्री अल्मा को शिक्षित करके कुछ बनाना चाहता है। इस बात को लेकर कदमबाई को रामसिंह पर गुस्सा आता है, वो अल्मा और राणा का जल्दी से विवाह कर देना चाहती थी। कदमबाई रामसिंह के बारे में सोचती है, “कैसा आदमी है! माना कि नए जमाने की बातें करता है, पर ब्याह नहीं करना था तो लड़के को घेरकर डालने का क्या मतलब? पास-पास रखकर बालकों को तरसाने में उसे क्या आनंद आ रहा था? अल्मा कहीं इसी बात पर ही दुखी हो रही हो, ऊपर से डकैतों का आना-जाना और लगा लिया। उसे तो लड़की की किंता रहनी चाहिए थी। ब्याह करके अपने फरज से उन्नत होता।”¹¹ माँ को अपने पुत्र की चिन्ता हमेशा ही रहती है।

जनजातीय समाज में महिलाओं का यौन-शोषण आम बात है। इस उपन्यास में अल्मा कई पुरुषों के शोषण का शिकार होती है। अल्मा जब श्रीराम शास्त्री के यहाँ लाई जाती है तो संतोले की बहू कहती है, “अल्मा हमारी जिंदगानी ऐसी ही है बस अपना दुख तुम खोलकर कह दो। दबाकर रखोगी तो बंद मुँह के घाव की तरह भीतर ही भीतर जहर फैलेगा। जहरीली चीज को लोग थूक देते हैं। अपनी देह की हिफाजत हमें ही करनी है।”¹² इस उपन्यास के माध्यम से यह भी पता चलता है कि औरतों का समाज में क्या दर्जा है। ‘अल्मा कबूतरी’ में जनजातीय स्त्री त्रासदी की वह गाथा है, जो सदियों से स्त्री को भोगनी पड़ी है। स्त्री चाहे किसी वर्ग की हो, उसे स्त्री होने की पीड़ा भुगतनी पड़ती है। इस उपन्यास में आरंभ से लेकर अंत तक स्त्री की त्रासदी और उसके संघर्ष को दिखाया किया गया है। अल्मा की अस्मिता बार-बार लूटी जाती है, पर वह जीवन के प्रति अदम्य जिजीविषा रखती है और अंत तक आत्मसंघर्ष करती है। वह आत्महत्या जैसी कायरता नहीं दिखाती है। वह स्वयं कहती है कि, “मेरे भीतर आस का एक नन्हा सा पंखी फड़फड़ाया करता है। कितनी बार पंख कटे, कितनी बार घायल हुआ, वह मरता नहीं। फिर-फिर फड़फड़ाता है और उड़ने की कोशिश करता है, ऊँचे से ऊँचा उड़ने को। वह डरता नहीं।”¹³

निःसंदेह उपन्यास में कबूतरा जनजाति के जीवन, संस्कृति, संघर्ष और पीड़ा भी व्याप्त है। इनकी पीड़ा को इस प्रसंग में महसूस किया जा सकता है। जैसे, “कुँआरी लड़की से कबूतरा लिपवाया गया। अगरबत्ती जलाई। देवताओं की मढ़िया बनाने के लिए कोरा कपड़ा ताना गया। बारी-बारी से लोग आते। उन्हें काँती पकड़ाई जाती। वे देवी के कबूतरे पर कट्टर का निशान लगाते। पवित्र मंत्र की तरह सबने बोला-कौल जंगलिया का मरण नहीं हुआ, कबूतरा कभी नहीं मरता, रानी पद्मिनी की संतान खत्म नहीं होती। कुनबी मर कर भी नहीं मरते।”¹⁴ निश्चित रूप से ‘अल्मा कबूतरी’ उपन्यास कबूतरा जनजाति को लेकर लिखा गया है, जिसमें कथा कबूतरा जनजाति के संघर्ष से शुरू होती है और अंत कदमबाई और अल्मा कबूतरी के संघर्ष तक खत्म होती है।

निष्कर्षतः मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यास ‘अल्मा कबूतरी’ में जनजातीय जीवन-संस्कृति और संघर्ष दर्शाया है। उपन्यास के पात्रों में यथार्थता की सच्ची अनुभूति दिखाई देती है। उपन्यास के मुख्य पात्र अपने समाज की उन रुढ़ियों एवं परम्पराओं को मानने को तैयार नहीं, जो किसी के पैरों को वेड़ी की तरह जकड़ लेती हैं। राहरी मायने में इनके पात्र सामाजिक वर्जनाओं का खुलकर निषेध करते हैं। इस दृष्टि में लेखिका ने इस उपन्यास में जनजातीय जीवन के अनेकानेक पक्षों, उनकी समस्याओं तथा संघर्ष को संवेदनापूर्ण अभिव्यक्ति दी है। निश्चित रूप से यह संदर्भ जनजातीय समाज के जीवन संघर्षों और उनकी संस्कृति को सुधारने का नया स्वर देता है और पाठकों को इनके जनजीवन के अपरिचित पहलुओं को से बखूबी परिचित भी कराता है।

सन्दर्भ :

1. मैत्रेयी पुष्पा : तथ्य और सत्य, आलोचना, संपा. दया दीक्षित, मैत्रेयी पुष्पा, सामयिक प्रकाशन, नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली-110002, संस्करण, 2010, पृ. 268
2. हिन्दी का गद्य-साहित्य, डॉ. रामचन्द्र तिवारी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, विशालाक्षी भवन, चौक, वाराणसी-221001, संस्करण, 2014, पृ. 280
3. हिन्दी का गद्य-साहित्य, डॉ. रामचन्द्र तिवारी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, विशालाक्षी भवन, चौक, वाराणसी-221001, संस्करण, 2014, पृ. 279
4. अल्मा कबूतरी, मैत्रेयी पुष्पा, राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, संस्करण, 1997, पृ. 28
5. अल्मा कबूतरी, मैत्रेयी पुष्पा, राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, संस्करण, 1997, पृ. 32
6. अल्मा कबूतरी, मैत्रेयी पुष्पा, राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, संस्करण, 1997, पृ. 62
7. अल्मा कबूतरी, मैत्रेयी पुष्पा, राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, संस्करण, 1997, पृ. 70
8. अल्मा कबूतरी, मैत्रेयी पुष्पा, राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, संस्करण, 1997, पृ. 110
9. अल्मा कबूतरी, मैत्रेयी पुष्पा, राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, संस्करण, 1997, पृ. 312
10. अल्मा कबूतरी, मैत्रेयी पुष्पा, राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, संस्करण, 1997, पृ. 343
11. अल्मा कबूतरी, मैत्रेयी पुष्पा, राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, संस्करण, 1997, पृ. 206
12. अल्मा कबूतरी, मैत्रेयी पुष्पा, राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, संस्करण, 1997, पृ. 371
13. अल्मा कबूतरी, मैत्रेयी पुष्पा, राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, संस्करण, 1997, पृ. 117
14. अल्मा कबूतरी, मैत्रेयी पुष्पा, राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, नई दिल्ली, संस्करण, 1997, पृ. 312

